Knowledgeable Research –Vol.1, No.9, *April 2023*

Web: http://www.knowledgeableresearch.com/

आधुनिक संस्कृत बाल-साहित्यपरक विधा

हेमराज सैनी
सहायक आचार्य, संस्कृत
राजकीय कन्या महाविद्यालय, बून्दी
ई-मेलः- hemrajsaini2011@gmail.com

****

शोध सारांश

आधुनिक काव्य जगत् में काव्यशास्त्रियों द्वारा 'साहित्य' शब्द का प्रयोग काव्य के अर्थ में मानकर ही विचार किया जाता है। पूर्व में 'काव्य' संज्ञा वस्तुतः कवि-कर्म को अभिव्यक्त करती थी-कवेः कर्म काव्यम्।

आधुनिक सन्दर्भ में काव्य के स्थान पर प्रयुक्त 'साहित्य' शब्द का व्यावहारिक प्रयोगों के साक्ष्य के आधार पर तीन अर्थों में प्रयुक्त किया गया है-

प्रथमतः - 'साहित्यपाथोनिधिमन्थनोत्थं काव्यामृतं रक्षत हे कवीन्द्रा'ः के साक्ष्य पर साहित्य शब्द का अर्थ बड़ा व्यापक है अर्थात् समस्त लिखित मौखिक वाङ्मय के अर्थ में भी साहित्य शब्द का प्रयोग होता है।

द्वितीयतः - 'साहित्ये सुकुमारवस्तुनि दृढ़न्यायग्रहग्रन्थिले' श्री हर्ष की इस उक्ति के साक्ष्य पर साहित्य शब्द को वाङ्मय के एक भाग विशेष 'काव्य' के अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है।

तृतीयतः - 'साहित्यविद्याश्रमवर्जितेषु.....' में साहित्य शब्द काव्य और काव्यशास्त्र के सम्मिलित अर्थ में प्रयुक्त किया गया है।

आधुनिक जीवन में साहित्य या काव्य शब्द संस्कृत में समान भाव को अभिव्यक्त करता है... 'सहितेन भावः साहित्यम्'। वस्तुतः प्राचीन काव्यशास्त्रियों से ले कर अर्वाचीन काव्यशास्त्रियों द्वारा 'काव्य' अथवा 'साहित्य' को अलग-अलग सन्दर्भों में परिभाषित किया जाता है। काव्यशास्त्र के आचार्य भामह का साहित्य के सन्दर्भ में मत है कि- "शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्।"1 अर्थात् सहभाव सम्पन्न शब्दार्थ ही काव्य है। शब्दार्थ का सहभाव व्यावहारिक वाक्य और शास्त्रीय या वैज्ञानिक चिन्तन परक वाक्यों में प्रत्यक्ष होता है। परन्तु काव्य का सहभाव इससे पृथक् है। वस्तुतः भामह शब्दार्थ के जिस भाव को साहित्य कहते हैं वह उत्कृष्ट कोटि का सहभाव है। वह सहभाव ऐसा हो कि एक तरफ पाठक विभिन्न पुरुषार्थों में व्युत्पन्न मति प्राप्त करे, साथ ही सहृदय बालक, तरुण अर्थात् काव्यमर्मज्ञों को आह्लाद तथा प्रसन्नता प्राप्त हो।

कुंजी शब्द- आधुनिक, साहित्य, गद्य, पद्य, खण्ड काव्य, उपन्यास, पत्र-पत्रिका, बाल साहित्य, एकांकी, काव्य।

****

मूल शोध पत्र-

वस्तुतः शब्दार्थ की समष्टि द्वारा वर्णित आख्यान को आचार्य भामह से लेकर मम्मट तक, काव्य के रूप में स्वीकार करने की अविच्छिन्न परम्परा का अनुमोदन प्रकट होता है। पण्डितराज जगन्नाथ द्वारा भी प्राकारान्तर से शब्दार्थ समष्टि से युक्त (रमणीय अर्थ के प्रतिपादक) शब्द को 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है। यथा कथन है- "रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्"2 वस्तुतः शब्द एवं अर्थ दोनों मिलकर ही काव्य संज्ञा प्राप्त करते हैं, पृथक्-पृथक् होकर नहीं। जैसाकि ध्वनिकार आनन्दवर्धन का कथन हैं-

"सहृदयहृदयाह्लादिशब्दार्थमयत्वमेव काव्यमिति।"3

अर्थात् सहृदयों को आह्लादित करने वाले शब्दार्थों की संघटना ही काव्य है।

यहां 'सहृदयता' क्या है? इस सन्दर्भ में महामहेश्वर अभिनवगुप्त पदाचार्य का कथन है- "येषां काव्यानुशीलनाभ्यासवशाद् विशदीभूते मनोमुकूरे वर्णनीयतन्मयीभवनयोग्यता ते हृदयसंवादभाजस्सहृदयाः इति।"

स्नातन कवि रहसबिहारी द्विवेदी ने भी सहृदयाह्लादन युक्त कवि सद्वाणी को ही 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है। यथा-

"सुहृदां हृदयाह्लादे लोकोद्बोधे च सङ्गता।
प्रज्ञावतः कवेः सद्वाक् काव्यमित्यभिधीयते।।"

अर्थात् सहृदयों के हृदयाह्लादन एवं लोक के उद्बोधन में संगत प्रतिभाशाली कवि की सद्वाक् ही काव्य कही जाती हैं। 'सहृदय'4 शब्द को ग्रहण करते हुए अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने काव्य को सहृदयास्वाद्य, कोविदास्वाद्य तथा लोकास्वाद्य इन तीन रूपों में विभक्त किया है। प्रो. मिश्र जी कहते हैं कि यहाँ 'सहृदया' वह हैं जो व्यङ्ग्यार्थ के अवगमन में समर्थ हो। किन्तु वर्तमान काव्य-जगत् में व्यंग्यार्थ के ज्ञाताओं की अल्पता होने के कारण अभिधेयार्थ युक्त 'सत्काव्य' ही लोकास्वाद्य होता है। अतः मात्र व्यङ्ग्यार्थ-संवलित कविता ही कवि के लिए श्रेयस्करी नहीं होती और न ही मात्र लक्ष्यार्थ से युक्त कविता प्रशंसनीय होती है। 'कविता'5 शब्द से प्रो. मिश्र का वक्तव्य 'लोक' (समाज) का यथेष्ट-अनुरंजन करने वाले माधुर्यादि गुणों से गुम्फित तथा अतिशय उदात्त वर्णनों से युक्त शब्दार्थ ही कविता है।

प्राचीन साहित्य का अनुसरण करते हुए वर्तमान युग में आविर्भूत 'बालसाहित्य' में समस्त वेद, शास्त्र-इतिहास-पुराकथाएँ-काव्य एवं नाट्य ; यहाँ तक की समस्त साहित्यक विधाएँ भी सम्मिलित हैं।

वस्तुतः अर्वाचीन युग में सन्धानित बालकाव्य का मुख्य प्रयोजन भी अनेक विधा आधारित साहित्य के माध्यम से बालकों में नैतिक चरित्र, संस्कार-शील-राष्ट्रभक्ति, पर्यावरण चेतना जैसे नैतिक मूल्यों को आत्मसात् करवाने का कविप्रयोजन दृष्टिगोचर होता है।

कविवर प्रो. राधावल्लभत्रिपाठी जी ने भी भावों को स्फूर्त करने वाले तथा लोक अर्थात् संसार का अनुसरण करने वाले शब्दार्थ को ही 'काव्य' शब्द से सम्बोधित किया है- यथा- 'लोकानुकीर्तनम् काव्यम्'।6

यथार्थतः प्रो. त्रिपाठी 'साहित्य' शब्द के अन्तर्गत पद्यबद्ध आधुनिक कविताओं के साथ-साथ गद्यबद्ध कथा-आख्यायिका का भी ग्रहण करते हैं।

अर्वाचीन लक्षण ग्रन्थों में यद्यपि पृथकतया बाल-साहित्य के लक्षण एवं भेद तो प्राप्त नहीं होते हैं किन्तु बाल-साहित्य में प्राप्त विधाओं के लक्षण आधुनिक काव्यलक्षण ग्रन्थों के काव्यलक्षणों से समानता रखते हैं। प्रो. सम्पदानन्द मिश्र जी (अध्यक्ष, बालसाहित्य परिषद, पुण्डुचेरी) के बालकाव्य ग्रंथों के प्राक्कथन में बाल-साहित्य की परिभाषा एवं स्वरूप का उल्लेख प्राप्त होता है-

> "बालानां बोधाय, बालानां चरित्रनिर्माणे, आत्मशक्तीनां विकसने च तेषु स्वदेश प्रेम्णः जागरणाय, सौन्दर्यबोधाय, तेभ्यः संस्कारप्रदानाय, समुचितनैतिकमूल्यबोधाय, बालकेषु संस्कृतप्रीतिं प्रदयितुं, तेषां भाषा ज्ञानं, वर्धयितुं बालानां रुच्यनुसारेण यत् साहित्यं विनिर्मितं तत् साहित्यं 'बालसाहित्यम्' इति शब्देन परिभाष्यते। वस्तुतः बालसाहित्यान्तर्गते नवनवशब्दानां प्रयोगः, नवनवकाव्यशैलीनां, काव्यविधानां नवनवविचाराणां च समावेशो भवति।"7

आधुनिक काव्यशास्त्रियों में अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने शब्दार्थ युक्त रसात्मक काव्य को ही दृश्य एवं श्रव्य काव्य के रूप में स्वीकार किया है। यथा-

> "दृश्यं श्रव्यं प्रकाराभ्यामादौ काव्यं द्विधा मतम्।"8

कविवर प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी जी ने काव्य को पाठ्य एवं दृश्य के अन्तर्गत दो भेदों में विभक्त किया है-

> "द्विविधं तत् पाठ्यं दृश्यं च।"9

यहाँ त्रिपाठी जी द्वारा 'पाठ्य' शब्द प्राचीन विद्वतगण द्वारा प्रतिपादित 'श्रव्य' काव्य से समानार्थक रखता है। त्रिपाठी जी का वक्तव्य है कि जिस प्रकार प्राचीन काल में कविगण सदन अथवा समाज में अपने काव्य का पाठ करते थे तथा सहृदय सामाजिक गणों से सुनने से उस काव्य को 'श्रव्य' शब्द से सम्बोधित करते थे। किंतु वर्तमान में साहित्य का रूप मुद्रित पुस्तकों के रूप में उपलब्ध होने से श्रव्य काव्य का 'पाठ्य' काव्य में रूपान्तरण हो गया है। प्रो. मिश्र जी ने श्रव्य काव्य को परिभाषित किया है कि- "जो काव्य श्रवणेन्द्रिय (कर्णेन्द्रिय) ग्राह्य हो, वह 'श्रव्य काव्य' कहलाता है।"10

मिश्रजी का वक्तव्य है कि वह श्रव्य काव्य तीन प्रकार का होता है- पद्य-गद्य एवं मिश्र काव्य। यहाँ 'पद्य' काव्य से प्रो. मिश्र जी का अभ्रिप्राय चार पदों अथवा चरणों से निबद्ध काव्य से हैं। आचार्य भरतमुनि 'पद्य' के स्थान पर 'बन्ध' शब्द का प्रयोग करते है। 'बन्ध' पद को लक्षित करते हुए आचार्य भरत कहते हैं- बन्धभेदमाचार्यभरतो चूर्णनिबद्धशब्दाभ्याम् नियताक्षर प्रमाण-नियताक्षरशब्दाभ्यां वा बोधयति। वस्तुतः बाल-साहित्य में उपलब्ध श्रव्य-काव्य बालमनोऽनुकूल 'कविता' अथवा 'गीतविधा' में उपलब्ध होता है।

बाल-साहित्य में स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त श्रव्य काव्य छन्दोबद्ध होता है किंतु मुक्तक शैली की प्रधानता ही वहाँ अधिकांशतया प्राप्त होती है। श्रव्य बालकाव्यों का मुख्य प्रयोजन भी साहित्यानुरागी मनोरंजन प्रिय एवं सहृदय सुकारमति प्रयुक्त बालकों को नैतिक ज्ञान की शिक्षा उपलब्ध करवाना है।

श्रव्यकाव्य में परिगणित पद्य को नाट्यशास्त्रकार आचार्य भरत ने 'नियताक्षरमाख्यातं'। शब्द से सम्बोधित किया है। यह नियताक्षर पद्य समवृत्त, विषमवृत्त एवं अर्धसमवृत्त के भेद से तीन प्रकार का होता है।11 बाल-साहित्य में भी इन तीनों प्रकारों का प्रयोग द्रष्टव्य है।

बाल-साहित्य में प्रयुक्त श्रव्य काव्य का द्वितीय भेद हैं गद्य। प्रो. मिश्र जी ने गद्य के लिए 'चूर्णपद' का प्रयोग किया है। नाट्यशास्त्र में चूर्णपद को परिभाषित करते हुए भरत मुनि कहते हैं-

"अनिबद्धपदच्छन्दस्तथा चनियताक्षरम्।
अर्थापेक्षाक्षरस्यूतं ज्ञेयं चूर्णपदं बुद्धैः।।" (अष्टादश अध्याय)

अर्थात् अनिबद्ध पदच्छन्दों वाला, अनिश्चित अक्षर संख्या वाला तथा अर्थापेक्षानुसारी अक्षर-विस्तार वाला बन्ध विद्वानों द्वारा 'चूर्णपद' कहा जाता है। अतः आचार्य भरत की दृष्टि में 'चूर्ण' ही गद्य है। सामान्यतः व्याकरणात्मक दृष्टि में 'गद्य' शब्द 'गद्' धातु (व्यक्तायां वाचि) से यत् प्रत्यय लगाकर बना है जिसका अर्थ हैं मानव की अभिव्यक्ति की मौलिक प्रक्रिया।

दण्डी ने काव्यादर्श में 'गद्यकाव्य' की परिभाषा देकर उसे आख्यायिका और कथा के रूप में विभाजित किया है-

"अपादः पदसन्तानो गद्यमाख्यायिका कथा।" (1/13)

साहित्यदर्पणकार पं. विश्वनाथजी ने समास के प्रयोग तथा वृत्तभाग के निवेश की दृष्टि से गद्य के चार प्रकार माने हैं- मुक्तक, वृत्तगन्धी, उत्कलिकाप्राय, चूर्णक। प्रो. मिश्र जी ने भी चूर्णबन्ध गद्य के पं. विश्वनाथ सम्मत चारों भेद स्वीकार है। प्रो. मिश्र जी का कथन हैं-

"गद्यं चतुर्विधं प्रोक्तं मुक्तकं वृतगन्धि च।
ततश्चोत्कलिका प्रायं चूर्णकं चान्तिकं मतम्।।
असमस्तपदं मुक्तं पद्यांशि वृतगन्धि च।
अन्यदीर्घसमासाढ्यं चूर्णमल्पसमासकम्।।"12

अर्वाचीन संस्कृत बालसाहित्य में उपर्युक्त चारों प्रकार के गद्य के प्रकारों के अंश प्राप्त होते हैं। बाल-साहित्य में समासहीन पदों वाले मुक्तक गद्य पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

वृत्तगन्धि गद्य पद्यांशो से युक्त अर्थात् पद्य जैसा ही प्रतीत होता हैं। यहाँ गद्य में ही पद्य का आभास होता हैं, यथा -

एवं वर्णयन् कृषकः पुनः पाषाणः अभवत्।
तदनु बुद्धिजीवी जीवन् वर्णयितुं प्रारब्धवान्।।13

प्रस्तुत गद्यांश में वर्णित है कि कृषक पुनः पाषाणवत् हो गया। यह अंश छन्द की दृष्टि से अनुष्टुप जैसा ही प्रतीत होता है। वस्तुतः वृतगन्धि गद्य युक्त बाल-साहित्य अल्प मात्रा में ही उपलब्ध होता है।

उत्कलिकाप्राय गद्य दीर्घसमासों से ओतप्रोत होता है। बाल-साहित्य में उत्कलिकाप्राय गद्य की अल्पता अभिव्यक्त होती है। कवि बालमानस को दृष्टि में रखते हुए इस प्रकार के गद्य के प्रयोग से बचने का प्रयास करता है। यथा-

स्वकीयस्मरभावमिङ्गिताकारचेष्टाभिः प्रकाशितवान्।
द्विजिह्वस्नुषा तु तं सुदर्शनजम्बुकयुवकं दृष्ट्वैव मदविह्वलाऽऽसीत्।"14

चूर्णक गद्य अल्पसमास युक्त होता है। यहाँ सम्भाषण युक्त भाषा शैली में लघु-लघु समासरहित, सार्थक शब्द युक्त वाक्यों का प्रयोग द्रष्टव्य हैं-

आगच्छ मेघ! आगच्छ मातुल! आगच्छ मातुल!
रोटिका उष्णा। उष्णं च शाकम्।.....
वृष्टिं कुरु मातुल! भगिन्या धरित्र्या दुखं हर मेघ!15

(क) बालसाहित्य परक: खण्डकाव्य (गीतिकाव्य)

वस्तुतः अर्वाचीन संस्कृत बालसाहित्य में उपलब्ध स्तरीय बालसाहित्य जहाँ विभिन्न वृत्तगन्ध में सन्निहित हैं वहीं दूसरी और बालकों के ज्ञानार्थ लिखित विभिन्न गीत एवं कविताएँ मुक्तक प्रकारों में परिलक्षित होते हैं। पद्यकाव्य का लक्षण देते हुए विश्वनाथ जी ने कहा है-

छन्दोबद्धपदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम्।

द्वाभ्यां तु युग्मकं संदानितकं त्रिभिरिष्यते।।

कलापकं चतुर्भिश्च पंचभिः कुलकं मतम्।16

पूर्वाचार्यों द्वारा कथित पद्यकाव्य को पुनः प्रो. मिश्र जी ने दो भेदों-मुक्तक एवं प्रबन्ध काव्य में विभाजित किया है। यहाँ मुक्तक पुनः युग्मक, सन्दानितक, कलापक, कुलक एवं शतकादि भेदों में विभक्त है।17 मूलतः तो पद्यबन्ध काव्य मुक्तक एवं प्रबन्ध, इन दो भागों में ही विभाजित है। मुक्तक अर्थात् पिछले एवं अग्रिम कथा सन्दर्भ से जो मुक्त हो, स्वतंत्र हो- वह पद्य मुक्तक कहलाता है। 'अभिनवगुप्तपादलोचनटीका'18 में मुक्त शब्द को स्पष्ट करते हुए कहा है कि दूसरे द्वारा आलि›ित न होना। मुक्त पद्य ही मुक्तक है। कन् प्रत्यय संयोजित होने से 'मुक्तक' पद निष्पन्न होता है। अतः स्वतंत्रतापूर्वक समाप्त होने वाला, निजेतर अर्थ की आकांक्षा न करने वाला तथा प्रबन्ध काव्य के बीच में परिलक्षित पद्य 'मुक्तक' होता है। बाल-साहित्य में मुक्तक काव्य प्रबन्ध काव्यों के ही समान रसाभिनिवेश युक्त होते हैं।

यथा-

यदाऽऽहवे नीलतरङ्गिणीतटे,

सिताङ्गिनां फ्रेंचजदेहिनां तया।

तथा शतहन्योऽसय आपतन्नृषु

पतान्ते वृष्टौ करकाकरा यथा।।19

इसी प्रकार अभिराज राजेन्द्र मिश्र का यह पद्य भी रसाभिनिवेश से युक्त मुक्तक काव्य का श्रेष्ठ उदाहरण है-

"एका चटका स्थिता गवाक्षे द्वे चटके प्रोड्डीने,

तिस्त्रश्चटका बहिरुद्याने संक्रीडन्ते पीने।

माणवकाः संयोज्य वदत, सर्वा एता नु कियत्यः?

एका द्वे तिस्त्रश्चटकास्ताः षट् संख्या गतिमत्यः।।"20

प्रस्तुत पद्य, पूर्व पद्य एवं पर पद्य के सन्दर्भों से किसी भी प्रकार सम्बन्धित नहीं हैं।

मुक्तक काव्य के भेद-निरूपण के सन्दर्भ में पं. विश्वनाथजी का कथन हैं-"दो पद्यों के समन्वय से युग्मक, तीन पद्यों के समन्वय से सन्दानितक, चार पद्यों के समन्वय से कलापक, तथा पाँच पद्यों के समन्वय से युक्त मुक्तक को कुलक कहते हैं। प्रस्तुत भेद-निरूपण में परिगणित 'युग्मक' का उदाहरण परिलक्षित है-

"यात्यागतिमपि परावर्तितुं ननु ममास्ति शक्तिः।
प्रत्यक्षं प्रकृटिकर्तुं चणिकां, परा भक्तिः।।"
"आर्षमहिम्नां समुच्चयाश्चामीकरकणा वयम्।
खरदूषणजीवातुहराः श्रितदण्डकवना वयम्।।"21

इसी तरह कवि गण बाल-साहित्य में 'सन्दानितक' छन्दोबद्ध पद्यों का भी प्रचुरता से प्रयोग करते हैं- यथा-

काममद्य शिशवः परन्तु युवकाः श्वस्तना वयम्।
वयं शासका वयं सैनिका अरिमर्दना वयम्।।
स्वप्नाः सन्ति सहस्रमिता लोचनयोरस्माकम्।
सङ्कल्पाश्च सहस्रमिता नूनं हृदयेऽस्माकम्।।
स्वप्नानहो पूरयिष्यामो विक्रमधना वयम्।
सङ्कल्पे प्रभविष्यामः पुरुषार्थश्रमा वयम्।।22

इसी तरह चार पद्यों के संयोग से युक्त 'कलापक' भी बाल साहित्य में द्रष्टव्य हैं-

"इतिहासं नूतनं चरित्रैः स्वीयैः रचयिष्यामः।
काले समागते बन्धो! के वयमित्याख्यास्यामः।।
वेदपुराणस्मृतिगीताङ्गमहिमाऽन्वितवाणी।
संस्कृतनाम्नी जयति भारते निखिलविश्वकल्याणी।।
पायं पायं यत्प्रतिपाद्याऽमृतममराः संजाताः।
वयं विश्वगुरवोऽधुनातना विश्वबन्धुतास्नाताः।।
हिमगिरिगङ्गोदधित्रिवेण्या तीर्थपतिं स्नक्ष्यामः।

काले समागते बन्धो! के वयमित्याख्यास्यामः।।“23

इसी प्रकार पाँच पद्यों से युक्त ‘कुलक’ का उदाहरण डाॅ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत ‘बालतरङ्गिणी’ ग्रन्थ के ‘शब्दधातुरूपाण्यवगच्छ’ पुत्र! ‘संस्कृतं पठ निजभाषायाम्’तथा ‘दुग्धं किन्न पिबसि कविबाले’ एवं ‘बाल कवितासंग्रह’ में प्रचूरतया उपलब्ध होता है। इसी तरह ‘अगस्त्यः’24 कविता के अन्तर्गत 6 पद्यों से युक्त ‘कुलक’ का सुन्दर उदाहरण प्राप्त होता है।

इसी प्रकार बाल-साहित्य में मुक्तक के समान ही प्रबन्ध काव्य का सन्निभिवेश भी दिखाई देता है। प्रबन्ध काव्य का लक्षण अभिव्यक्त करते हुए प्रो. मिश्र जी का कथन है-

पद्यान्तरनिरपेक्षं यथा भवति मुक्तकम्।
पूर्वाऽपरकथापेक्षं प्रबन्धं प्रोच्यते तथा।।

अर्थात मुक्तक काव्य में पद्य का पूर्व पद्य एवं पर पद्य से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता है। प्रबन्ध काव्य मुख्यतया दो प्रकारों-महाकाव्य एवं खण्डकाव्य में विभक्त हैं। अर्वाचीन बाल-साहित्य में महाकाव्य के उदाहरण प्राप्त नहीं होते अथवा साहित्यकारों द्वारा काव्य सन्धान का प्रयास नहीं किया गया है। किंतु खण्डकाव्य का प्रयोग परिलक्षित होता है। खण्डकाव्य का लक्षण प्रतिपादित करते हुए पं. विश्वनाथ जी ने कहा है-

“खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च।“25

प्रो. राजेन्द्र मिश्र जी ने खण्डकाव्य का लक्षण प्रतिपादित किया है-

“कस्यचित्पुरुषार्थस्य वर्णनन्तु यदांशिकम्।
जीवनस्याथवा नेतुः खण्डकाव्यं तदुच्यते।।
खण्डकाव्यमिदं चैव स्वेतिवृत्तानुरोधतः।
विविधान्यभिधानानि पृथगर्थानि गच्छति।।“26

अर्थात् जिस काव्य में किसी पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम) का आंशिक सांगोपांग वर्णन प्राप्त होता हैं अथवा नायक के जीवन के केवल एक भाग का ही वर्णन प्राप्त होता है तो उसे खण्डकाव्य कहते हैं। यहीं खण्डकाव्य स्व इतिवृत के अनुरोधवश, पृथक अर्थ वाले विविध नामों (संज्ञाओं) को धारण करता है। त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने खण्डकाव्य को गीतकाव्य के नाम से भी संबोधित किया है। क्योंकि गीतकाव्य में भी गीत तत्त्व की ही प्रधानता होती हैं। संस्कृत बाल-साहित्य में विपुलतया गीत काव्यों का प्रयोग उपलब्ध होता है। यथा त्रिवेणी कवि राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कौमारम् (शिशु गीतसंग्रह), डाॅ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत' बालतरङ्गिणी' इत्यादि प्रधान गीत काव्य है। गीतकाव्य का लक्षण देते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र का कथन है-

"यच्च गीतिषु सामाख्येत्युक्तमासीत्पुरातनैः।
तेमैव गीतितत्त्वस्य महत्त्वं धुरि संस्थितम्।।
न तथा व्यंजनैस्तृप्तिर्यथा हि चषकाम्भसा।
ननु धर्माभितप्तस्य पथिकस्याभिजायते।।"
तथैव रसिकस्यापि महाकाव्यानुशीलनात्।
जायते न तथाऽऽनन्दो यथा गीतेन तत्क्षणम्।।
अलङ्कारस्यौचित्यध्वनिवक्रोक्तिरीतिभिः।
तस्मादलं यतो गीतं काव्यास्यात्मेति निश्चितम्।।
तस्माददयतने काव्ये गीतमेव महीयते।
अमन्दानन्दसन्दोहस्त्रोतस्त्वादधिसंस्कृतम्।।
गीतिर्गीतं च गेयं च गानमेतन्मिथस्समम्।
प्रत्ययाच्छब्दवैभिन्न्यं न पुनर्धातुयोगतः।।"27

यह सत्य है कि बालगीतों में राग तत्त्व का अविरल प्रवाह होता है। यह राग तत्त्व बालकों के हृदय को आकृष्ट करने में समर्थ होते हैं। बालगीतों में गेय तत्त्व बालकों के अन्तमन मन में रोमांच एवं मर्मस्पर्शिता उत्पन्न करने में समर्थ होता है। शूद्रक का मत है कि गीत काव्य में निम्नलिखित गुण स्फुट (परिभाषित) होते हैं-

रक्तं स्फुटं समं चैव मधुरं च मनोहरम्।
भावान्वितं भवेद्गीतं ललितं चेति शूद्रकः।।

आधुनिक संस्कृत-साहित्य में परिलक्षित यह बालगीत न केवल बालक बालिकाओं को सन्तुष्ट करने में समर्थ होते हैं अपितु पशु-पक्षी, मृगादि जानवरों के हृदय को भी आकर्षित करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'अभिराजयशोभूषणम्' काव्य शास्त्रीय ग्रंथ में गीतकाव्य के मुख्यतया दो भेद स्वीकार किये हैं प्रथम-शास्त्रीय गीत काव्य तथा द्वितीय लोकगीत। शास्त्रीय गीत काव्य को परिभाषित किया है कि यह गीत विभिन्न प्रकार की रागों के माध्यम से गाया जाता है। जबकि लोकगीत में स्वतंत्र रीति से सम्प्राप्त कण्ठध्वनि से सुखपूर्वक गायन किया जाता है। बालगीतों में यद्यपि किसी राग विशेष का प्रयोग द्रष्टव्य नहीं है परन्तु इनका मुख्य प्रयोजन शिशुओं अथवा बालकों के हृदय में रमणीयता एवं कौतुकता उत्पन्न करना हैं। साथ ही यह बाल-गीत बालकों के लिए ही लिखे गए हैं।

अतः बालगीतों में कौतुकता, रमणीयता, हृदयहारिता, विनोदप्रियता, रूचि युक्त, चमत्कारवर्धक, रसयुक्त, सरल-सरस भाषा शैली, प्रसाद गुण सम्पन्न, अल्पाक्षर, वैदर्भी रीति, मिश्रित तथा लय इत्यादि गुणों का समावेश होता है। यथा अनुप्रास युक्त अनुरणात्मक लययुक्त बालगीत के अंश उद्धृत हैं-

ग्राममन्दिरे घण्टानादः।

घण्टानदन्ति सांयकाले।

सांयकाले शेते देवः।

देवगृहे नीराजनदीपाः।

ग्राममन्दिरे नीराजनायां।

सांयकाले घण्टानादः।।28

(ख) बाल साहित्य परक: कथा संग्रह

पद्य काव्य के अनन्तर संस्कृत बाल-साहित्य में उपलब्ध गद्य काव्य भी बालकों के लिए रमणीय तथा मनोरंजन प्रधान होता हैं। उपलब्ध काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में गद्य-काव्य के दो भेद स्वीकार किये हैं- कथा एवं आख्यायिका।

यह सत्य है कि आधुनिक बाल-साहित्य में कथा-साहित्य की कादम्बरी सदृश दीर्घकथाओं का अभाव है। किन्तु यहाँ बाल-साहित्यकार का मुख्य प्रयोजन लघु-लघु कथाओं के माध्यम से बालकों का मनोरंजन प्रदान करने के साथ ही नैतिक शिक्षा प्रदान करना हैं। अर्वाचीन संस्कृत बाल-साहित्य में यद्यपि पृथक् से बाल-कथा का लक्षण प्राप्त नहीं होता है, किंतु कहीं न कहीं बाल-कथाओं की कथावस्तु भी प्राचीन कथा लक्षणों से साम्यता रखती है। जैसाकि पं. विश्वनाथ जी का कथन है-

"कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेवे विनिर्मितम्।"29

अर्थात् सरल एवं ललित कथावस्तु से युक्त गद्य-काव्य को 'कथा-शब्द' से सम्बोधित किया जाता है।

अर्वाचीन संस्कृत साहित्य में आचार्य पùशास्त्री का कथा लक्षण, बालकथा साहित्य के लक्षणों को आत्मसात करता हुआ चरितार्थ हुआ है-

भूतलेऽस्मिन् विशेषेण मानवोऽये कथाप्रियः।

कथाभिः कल्पनाशक्तिः बालकेषु विवर्धते।।

शैली लोककथान्मन्तु सजीवा कल्पनाश्रिता।

सत्या भाति विचित्रापि चादर्शे प्रतिबिम्बवत्।।

बीजवच्च कथासूत्रं पद्मपल्लववत्कथा।

एका चैव कथा भङ्ग्या कथ्यते च सहस्रधा।।

हिन्द्यां श्रीचन्द्रनमुनेश्चोद्बोधकथा च।

सन्ति, चान्याश्च, सर्वेषामाभारं शिरसा वहे।।

कथानान्नानुवादोऽयं शतकेऽस्मिन् हि विद्यते।

केवलं हि कथासूत्रबलेनाऽत्र प्रपंचितम्।।

कथासु गुम्फितं चास्ति समग्रं लोकजीवनम्।

बालकानां विबोधाय कथानां च निदर्शनम्।।

बाला विविधभावानां कथाः श्रुत्वा प्रहर्षिताः।

ऐक्यभावनाया युक्ता विश्वशान्ति प्रवर्धकाः।।

गुम्फितं संस्कृतकथाशतकं सरलं मया।

संस्कृतस्य प्रसाराय मनोरंजनहेतवे।।

निर्धारयिष्यन्ति धुरवं नीरक्षीरविवेकिनः।

कथाकारश्रमं चात्र वीक्ष्य विद्वज्जनाः स्वयम्।।30

इसी तरह प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा कथा साहित्य का लक्षण देते हुए कहा है-

प्रबन्धात्मकगद्यस्य रूपद्वयमुदाहृतम्।

कथेति प्रथमं तत्राऽख्यायिकेत्यपरं मतम्।।

कथा तत्र भवेद्रम्या सरसा कल्पनाश्रिता।

दिव्याऽदिव्येवृत्तांशाः विविधानुभवैर्युता।।

अर्थात जो रमणीय, सरस, ललित तथा कल्पना आदि गुणों से युक्त हो, जो दिव्य अथवा अदिव्य कथावस्तु आधारित हो, वह कथा कहलाती है। यथा-त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत कान्तारकथा, डाॅ. केशवचन्द्रदाश द्वारा लिखित उर्मिचूड़ा, महान्, एकदा, पताका तथा पèशास्त्री द्वारा प्रणीत 'विश्वकथाशतकम्' आदि बालकथाओं के अन्तर्गत परिगणित है।

इसी तरह अर्वाचीन बाल-साहित्य में बालकों के चारित्रिक अभ्युत्थान हेतु नैतिक शिक्षा आधारित विशेष प्रयोजन व्यक्त करने के लिए कथानिका (कहानी) प्राप्त होती है। यद्यपि अग्निपुराण32 में वेदव्यासजी द्वारा गद्यकाव्य के पाँच भागों में कथानिका को भी प्रतिपादित किया है यथा-कथा, खण्डकथा, परिकथा, आख्यायिका एवं कथानिका।

अम्बिकादत्त व्यास जी द्वारा 'गद्यकाव्य मीमांसा'33 में उपन्यास को नो भागों में विभाजित करते हुए उनकों कथा व कथानिका नाम से सम्बोधित किया है जैसे-

कथा कथानिका चैव कथनालापकौ तथा।
आख्यानाख्यायिके खण्डकथा परिकथाऽपि च।।
संकीर्णमिति विज्ञेया उपन्यासभिदा नव।।

वस्तुतः कथानिका में कथा के प्रारम्भिक भाग में भयानक रस, मध्य में करुणरस तथा कथा के अन्त में अद्भुत रस की कल्पना की जाती है।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने कथानिका का लक्षण प्रतिपादित करते हुए उसे लघु एवं दीर्घ नामक दो भेदों में उल्लेखित किया हैं यथा-

प्रतिष्ठाधुरमध्यास्ते कथाभेदो हि कश्चन।
अभीष्टा सर्वभाषासु प्रोच्यते सा कथानिका।।
गृहीत्वा किमुप्युद्देश्यं लोकाभ्युदयकारकम्।
चित्रणेनचरित्राणां सरलयो कथानिका।।
क्वचित्पात्रमुखेनैव क्वचिल्लेखकभाषया।
क्वचित्संवादपद्धतया पूर्वोन्मेषदिशा क्वचित्।।
शिल्पान्तरैरनेकैश्च निबद्धेयं कथानिका।
लघ्वी दीर्घेति भेदाभ्यां द्विविधैव महीयते।।34

प्रो. सुकान्तकुमारसेनापति द्वारा रचित 'सुकान्तकथाविंशतिः' में 20 कथानिकाओं का संग्रह हैं। यहाँ प्रत्येक कथानिका में जीवन मूल्य आधारित शीर्षक के माध्यम से बालकों को नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। यहाँ कथानिकाओं के संवाद लेखक द्वारा स्वकीय भाषाशैली में सरल रूप में अभिव्यक्त किए गए हैं।

प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने लघुकथा को अल्प विषयाधारित, अद्भुत रस समन्वित, एक पात्र युक्त, सरल-सरस एवं आश्चर्य गुणों से युक्त, हृदय को झंकृत करने वाली, अल्पाक्षर, अभिधा शब्द-शक्ति युक्त एवं लघु आकार वाले लक्षणों से परिभाषित किया है। लघुकथा के विषय में सनातन कवि आचार्य रहस-बिहारी द्विवेदी का कथन है-

> उपन्यासस्य चैकांशश्चारुगद्यसमन्वितः।
> प्रायशः कल्पितं वृत्तं समाश्रित्य प्रवर्तते।।
> स्थाने काले क्रियायाश्च तत्रैभ्यं तथ्यगर्भितम्।
> प्रेरकं च सदुद्देश्यं यस्याः लघुकथा च सा।।

उपर्युक्त गुणों एवं लक्षणों से युक्त बाल-लघुकथाओं में प्रमुख रूप से डाॅ. जनार्दन हेगड़े द्वारा लिखित 'बालकथासप्तति'' (2013 ई.) एवं डाॅ. संजीव प्रणीत 'बोधकथा' (2011) इत्यादि परिगणित है।

लघुकथाओं के समान ही बाल-साहित्य के अन्तर्गत बालकों के अवबोधार्थ परिकथाओं का भी प्रणयन किया गया है। परिकथा का लक्षण देते हुए महामहेश्वर अभिनवगुप्त का कथन हैं-

> "एकां च धर्मादिपुरुषार्थमुद्देश्यप्रकार वैचित्र्येणाऽनन्तवृत्तान्त वर्णनप्रकारा परिकथा। एकदेशवर्णना खण्डकथा। समस्तफलान्तेतिवृत्तवर्णना सकलकथेति।"

अर्थात् बालकों के अवबोध हेतु प्रणीत परिकथाओं का मुख्य प्रयोजन धर्मादि किसी एक पुरुषार्थ की सिद्धि करना है। जैसे-डाॅ. के. वरलक्ष्मी द्वारा प्रणीत 'शिशुस्वान्तम्' (कथासंग्रह) में शिष्यवत्सला धात्री, अहो लक्ष्मीः, अनुशासकः शिक्षकः, विनायकः दृष्टः इत्यादि परिकथाओं

के माध्यम से शिशुओं एवं बालकों को धार्मिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान की गई हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा 'परिकथा' का लक्षण उल्लेखित हैं-

एकमेव समुद्दिश्य पुरुषार्थप्रवर्तिताः।
याश्च प्रकारवैचित्र्यैस्ता वै परिकथा स्मृताः।।35

बाल-कथाओं में समावेशित परिकथाओं का मुख्य प्रयोजन बालकों की कल्पना शक्ति का विकास करना है। आधुनिक जीवनबोध से परिपूर्ण यह परिकथाएँ बाल-साहित्य के सभी पक्षों की पूर्ति करती हैं। काश्यपजी ने कहा है कि- "जादू-टोने तथा अतिमानवीय शक्तियों का विस्तार आगे चलकर काॅमिक्स के रूप में सामने आया, जिसमें टीमैन, स्पाइडरमैन जैसे अतिमानवीय चरित्रों को गढ़ा गया। भारत में शक्तिमान के नाम से भारतीय संस्करण तैयार किया गया, जिसका बच्चों ने भरपूर स्वागत किया।" लेकिन ऐसे चरित्रों की लोकप्रियता के बावजूद यह माना जाता रहा है कि ये बच्चों को यथार्थ से परे कल्पना की दुनिया में ले जाते हैं।इनसे गुजरने वाला बालक एक काल्पनिक दुनिया में रहने का आदी हो जाता है। अतः परीकथाओं के आलोचक मानते हैं कि ऐसी कथानक आधारित कथाऐं बालकों में अंधविश्वास तथा रूढ़ियों को बढ़ावा देते हैं।

इसी तरह बालकथा साहित्य के अन्तर्गत विज्ञान कथाएँ भी प्राप्त होती हैं। वैज्ञानिक कथानक आधारित परिकथाएँ बालकों की कल्पनाशक्ति को प्रखर करती हैं। यथा 'कनीयान् राजकुमारः' (अनूदित काव्य) में कवि फ्रांसिसी बालक लिओं की कल्पनाशक्ति का वर्णन करने के साथ ही उसके हृदय एवं मानस पटल में उत्पन्न होने वाली वैज्ञानिक दृष्टि एवं वैज्ञानिक चिंतन का भी वर्णन करता है। यह वैज्ञानिक काल्पनिकता बालक लिओं में सकारात्मकता का संचार करती हैं।

परिकथाओं के अन्तर्गत ही संस्कृत बाल-कथा साहित्य में सकल कथा अथवा दीर्घकथा का भी प्रणयन किया गया है, जहाँ बालकों को विभिन्न प्रकार की व्यावहारिक जानकारी प्रदान की गई हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र प्रणीत 'कान्तारकथा' (अनूदित बालसाहित्य, 2009 ई.), आदि दीर्घकथाएँ भी सरल एवं अल्पाक्षर युक्त चूर्णक शैली में बालकों के ज्ञानवर्धन हेतु विरचित एवं अनूदित (दूसरी भाषाओं से संस्कृतानुवाद) की गई हैं। यह दीर्घकथाएँ बालकों को पशु-पक्षी, सरीसृप, वनस्पति एवं वैज्ञानिक तत्त्वों से परिचय करवाती हैं।

(ग) बालसाहित्य परक: उपन्यास

इसी प्रकार प्रबन्धात्मक गद्य के द्वितीय भेद आख्यायिका का यद्यपि अर्वाचीन बाल-साहित्य में कोई ग्रन्थ प्रणयन मेरे मत में अभी तक नहीं हुआ है। किन्तु कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' विद्या बाल-साहित्य में वर्तमान में उपलब्ध है। उपन्यास का लक्षण प्रतिपादित करते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने उसे कथा एवं आख्यायिका का मिश्रण बताया है यथा-

"कथाऽऽख्यायिकयोः कश्चिन्मिश्रभेदोऽपि साम्प्रतम्।
उपन्यास इति ख्यातो भाषान्तरप्रतिष्ठितः।।
कालखण्डविशेषस्य समग्रं जनजीवनम्।
प्रतिबिम्ब इवादर्शे न्यस्यतेऽत्र सविस्तरम्।।
क्वचित्सामाजिकी क्रान्तिः सर्वोदयसमर्थिनी।
रूढ़िपाखण्डविध्वंसौ नवाचारः क्वचित्पुनः।।"36

वस्तुतः कथा एवं आख्यायिका के मिश्रित रूप 'उपन्यास' में किसी कालखण्ड विशेष का सांगोपांग जनजीवन दर्पणसदृश प्रतिबिम्ब के समान विस्तार से प्राप्त होता है परन्तु उपलब्ध एवं प्राप्त बालोपन्यासों में कालखण्ड विशेष का अल्प रूप से ही वर्णन प्राप्त होता है यथा

केश्वचन्द्रदाश प्रणित 'पताका' (बालोपन्यास) में स्वतन्त्रता दिवस के विशेष कालखण्ड का कौतुकतापूर्ण मात्रा में वर्णन किया गया है।

(घ) बालसाहित्य परक: अनूदित बालसाहित्य

अनूदित संस्कृत बाल-साहित्य में कवि अन्य भाषाओं में लिखित कविताओं, कथाओं का संस्कृत में अनुवाद करके शिशुओं, बालकों एवं किशोरों के मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन का प्रयत्न करता है।

व्याकरणात्मक दृष्टि से 'अनुवाद' शब्द अनु उपर्सग पूर्वक वद् धातु में घ´ प्रत्यय के संयोग से व्युत्पन्न होता है जिसका अर्थ है- 'अन्य भाषाओं में उपलब्ध पूर्वोक्त निर्देश का शब्दशः अनुवाद'।

संस्कृत बाल-साहित्य में अनुवाद विधा के बारे में श्रीमती कान्ड्रेगुल वरलक्ष्मीः ने उल्लेख किया है-

> अभिनयं वा अबीभयं वा अविश्यं वा
>
> इत्यादिषु शब्देषु निरन्तरं चिन्तनं विना साधुता न ज्ञायते।
>
> "नवग्रन्थरचनाकाशः अत्रैनामादरभावेन पश्यन्ति चेत् निर्दिष्टग्रन्थाः प्रभविष्यन्तीत्याशासे। अस्याः अनया रचनया पण्डिती वृद्धि शुद्धी जाते। न केवलमस्याः एतदध्ययनेनान्यासामन्येषामपि भविष्यतीति चाशासे।"

अर्वाचीन संस्कृत बाल-साहित्य में जहाँ लेखक संस्कृत में मौखिक बाल-साहित्य के लेखन में व्यस्त हैं वहीं कुछ साहित्यकार वैदेशिक भाषाओं में रचित बाल-साहित्य का शब्दशः अपनी विद्व्वता से संस्कृत भाषा में अनूदित कर संस्कृत बाल-पाठकों को रसास्वाद एवं हृदयावर्धक करने का अनूठा प्रयास किया है। इस विधा के अन्तर्गत प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र का सराहनीय प्रयास हैं जिन्होंने आंग्ल-भाषा में रुडयार्थकिपलिंग रचित JUNGAL STORY

संस्कृत में कान्तारकथा के रूप में प्रणयन एवं अनूदित कर संस्कृत बाल-पाठकों को जंगल भ्रमण का चर्मास्वादन प्रदान किया हैं। जिस तरह JUNGAL STORY ग्रन्थ के आधार पर आज आंग्ल एवं अन्य भाषाओं में एनिमेशन चलचित्र एवं काॅमिक्स द्वारा बालकों के मनोरंजन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जा रही हैं। उस आधार पर संस्कृत बाल-पाठकों के लिए प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा मोगली की घटना को 'कान्तारकथा' के रूप में प्रणयन करना अद्भुत सन्धान है। इसी तरह 'प्रो. गोपबन्धु मिश्र' द्वारा फ्रेंच भाषा में 'आन्त्वान-द-सेंत्-एक्वजुपेरी' द्वारा 'लिओवर्थम्' का संस्कृत में 'कनीयान् राजकुमारः' के रूप में अनुवाद किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में 'लिओवर्थ' नामक बालक की बाल्यावस्थाकालीन मानसिक अवस्था का काल्पनिक वर्णन हैं। लिओवर्थ प्रोढ़ावस्था में पदासिन होन पर अपने बचपन की शारीरिक एवं मानसिक विकास की चेष्टाओं को याद करता है। कवि स्वयं कहता हैं-

"लेओं वर्धस्य कृते
यदा सः बालः आसीत्।"

इसी तरह डॉ. के. वरलक्ष्मी द्वारा अनूदित 'पलायितश्चणकः' (गीतासुब्बाराव द्वारा मूलतः तेलगू में उपलब्ध) एवं 'गोरुमुद्दलु' (गीतासुब्बाराव द्वारा तेलगू भाषा में प्रणीत) काव्य, बालकों में बचपन में ही नैतिक संस्कार समारोपित करने के प्रयोजन से संस्कृत भाषा में अनूदित किए गए हैं। डाॅ. के. वरलक्ष्मी ने 'शिशुस्वान्तम्' (लघु बालनाटक) ग्रंथ में बालकों के लिए 50 लघुकथाओं की रचना की गयी हैं। यह कथाएँ यद्यपि आकार में लघु है किन्तु जीवन की कठिन एवं दीर्घ समस्याओं को सरलतया सुलझा देते हैं। साथ ही प्रणीत समस्त कथाऐं सरल-सरस एवं मनोरंजक पूर्ण भाषा शैली में प्रणीत है। यह कथाऐं बालकों का आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक विकास करने में पूर्णतया समर्थ हैं।

इसी तरह गोविन्द कृष्ण द्वारा लोक में प्रचलित 'अलीबाबा एवं चालिस चोर' कहानी का संस्कृत बाल-साहित्य में चैरचत्वारिंशत् कथा' के रूप में संस्कृत अनुवाद किया है। यह कहानियाँ जहाँ एक तरह बालकों को रसास्वाद एवं मनोरंजन प्रदान करती हुई उनमें जिज्ञासा एवं कल्पना तत्त्वों का संचार करती है, तो दूसरी तरफ बालकों का ज्ञानवर्धन भी करती हैं। इसी तरह 'संभाषण संदेशः' (मासिक पत्रिका) के 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत समय-समय पर तेलगू, कन्नड़, गुजराती, मराठी, बंगाली भाषाओं में लिखित बालकथाओं का अनूदित साहित्य के रूप में प्रकाशन होता रहता है। यह अनूदित बालसाहित्य, अबोध बालकों को सरल संस्कृत भाषा में मनोरंजन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान करने का पुनित कार्य कर रहा है।

(ङ) बालसाहित्य परक: नाट्यसंग्रह

बाल-साहित्य में प्राप्त श्रव्य काव्य के लक्षण निरूपण के पश्चात अब दृश्य-काव्य की उपलब्ध बाल विधानों का सन्धान किया जायेगा। दृश्य काव्य को परिभाषित करते हुए कविराज विश्वनाथ जी ने कहा हैं-

"दृश्यं तत्राभिनेयं"37

अर्थात् जिन काव्यों का दर्शकों अर्थात सहृदय सामाजिकों के समक्ष मनोरंजन हेतु या ज्ञानवर्धन के लिए र›मच पर अभिनय किया जाए, वह काव्य दृश्य अथवा रूपक कहलाते हैं। आधुनिक काव्यशास्त्र के पुरोधा प्रो. राधावल्लभ जी ने दृश्यकाव्य को परिभाषित किया है-

> "दृश्यं तु रूपकम् यत्तु काव्यं रङ्गमंचे प्रदर्शनाय कविना विरच्यते, तत्रैव तस्य सौन्दर्यमुन्मीलति तद् दृश्यम्। दृश्येऽपिभवत्येव पाठ्यांशः तस्य पाठो वाचिकाभिनयद्वारेण न तु विदधाति, अप्रयुज्यमाने वा दृश्यकाव्ये कश्चन पाठकोऽपि एकाकी तस्य पाठं कुरुते। तथापि प्राधान्येन प्रदर्शनायैव विरचितत्वात् क्रियामाणे प्रचलितेऽपि वा तस्य पाठे दृश्यकाव्यमिति संज्ञैव तत्रोचिता।"38

इसी तरह त्रिवेणी कवि प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने 'दृश्य काव्य' को 'रूप' शब्द से सम्बोधित किया है- "रूपं दृश्यतयाऽऽख्यातं"।39

अर्थात् दृश्यकाव्य को 'रूप' काव्य भी कहते हैं। रूपक, नाटय इत्यादि दृश्यकाव्य के अवान्तर भेद हैं। प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने पूर्वाचार्यों के मतों के समान ही रूपक के दश भेद स्वीकार किये हैं-

"नाटकं च प्रकरणं भाणः प्रहसनं तथा।
व्यायोगसमवकारौ डिमेहामृगवीधयः।।"40

इसी प्रकार भरतादि पूर्वाचार्यों के समान ही उपरूपक के 18 भेद स्वीकार किये गए हैं जो निम्नलिखित हैं- नाटिका, भणिका, गोष्ठी, दुर्भल्लीका, विलासिका, त्रोटक, सट्टक, काव्यरासक, नाटयरासक, संलापक, श्रीगदीत, प्रेङ्खण, शिल्पक, हल्लीश, प्रकरणी, प्रस्थान, उल्लायक-ये अठ्ठारह भेद यद्यपि उपरूपक के भेद प्रतिपादित किए गए हैं किंतु सभी एकांकी कोटि के हैं।41

संस्कृत बाल-साहित्य के केवल एकांकी प्रवृति वाले दृश्य काव्यों का ही प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। क्योंकि बाल-काव्यों का मुख्य ध्येय अल्प-परिश्रम से बालकों का विनोदजनन एवं नैतिक शिक्षा प्रदान करना है। एकांकी काव्य का लक्षण प्रतिपादित करते हुए प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने कहा है-

हिन्दी प्रभृतिभाषासु भारतीयासु साम्प्रतम्।
लघुनाट्यं यदेकाङ्कि सर्वाभीष्टं महीयते।।
देववाच्यपि तन्नूनं तद्वदेव प्रतिष्ठितम्।
नियन्त्रितं न तज्ज्ञेयमुपरूपकलक्षणैः।।
नायकोऽत्र भवेद्भूपः पण्डितः पामरोऽथवा।
दिव्योऽदिव्योऽथवाऽन्योऽपि शिक्षकोभिक्षुको यतिः।।
योऽपि काश्चिद् भवेन्नेता पुरुषो महिलाऽपि वा।
यादृशं चापि वृत्तं स्यान्नाट्यकृत्प्रतिभाश्रितम्।।
एकाहचरितं चैव लघुनाट्ये प्रयोजयेत्।

संवादबहुला भाषा व्यङ्ग्यगर्भाऽत्र सम्मता।।

रसः कोऽपि भवेदङ्गी नाटयवृत्ताऽनुगुण्यतः।

लक्ष्यमेकं परं तस्य भवेदङ्गप्रसादनम्।।

नाट्यशिल्पादिसम्बद्धं वैलक्षण्यं नवं नवम्।

एकाङ्केऽस्मिन्प्रयोक्तव्यं नाटयकत्रा यथामति।।42

उपलब्ध बाल-एकांकियाँ यद्यपि आकार में लघु होती हैं, किंतु बाल-एकांकियों का नायक अधिकांशतया सामान्य बालक-बालिकाएँ ही होती हैं। इन बाल-एकांकियों की विषयवस्तु भी एकांकी के समान ही एक दिन में घटित घटना के आधार पर प्रणीत होती है। यहाँ संवाद अभिधा शैली में ही निबद्ध होते हैं। रस की दृष्टि से इन एकांकियों में अधिकांशतया वात्सल्य, शान्त एवं हास्य रस की परिणती होती हैं। साथ ही रसों के प्रयोग का लक्ष्य बालकों के मनोरंजन अथवा उनकों नैतिक एवं व्यवहार-परक ज्ञान प्रदान करना है।

अर्वाचीन बाल-एकांकियों में मुख्यतया प्रो. राजेन्द्र मिश्र द्वारा रचित 'नाट्यनवग्रहम्' (जनवरी 2007 ई.), डॉ. रामकिशोर मिश्र प्रणीत 'बालनाट्यसौरभम् (1994 ई.), सौ. दुर्गापारखी कृत् 'बालनाट्यवल्लरी' (2013 ई.), पूजा लाल कृत 'बालनाटकान्', विघ्नहरिदेव प्रणीत 'बालकानाम् जवाहरः', डाॅ. ताराशङ्कर द्वारा लिखित 'वृक्षरक्षणम् (2013 ई. लघुनाटक) एवं हंसरक्षणम् (2013 ई. लघुनाटकम्) तथा एच.आर. विश्वास प्रणीत 'मार्जारस्य मुखं दृष्टम्' (2011 ई.) भी लघुनाटक अथवा बाल-एकांकियों के सुन्दर उदाहरण हैं।

(च) बालसाहित्य परक: पत्र-पत्रिकाएँ

संस्कृत बाल-साहित्य में पत्र-पत्रिका भी नवीन विधा के रूप में उभरकर आयी हैं। संस्कृत-बाल-पत्रिकाएँ बालकों को सरल-सरस, व्याकरण-रहित भाषा शैली में संस्कृत-भाषा का ज्ञान करवाने के साथ ही उनके मनोविनोद एवं नैतिक ज्ञान के लिए भी अत्यन्त सहायक हैं। संस्कृत में पत्रकारिता के पक्षधर बहु-भाषाविदों का मानना है कि 'पत्रकारता' और 'पत्रकारिता'

दोनों ही साधु शब्द हैं क्योंकि 'पत्रकरोति तच्छीलमस्य' इस व्युत्पत्ति से 'पत्र उपपदपूर्वक','डुकृ ंकरणे' इस अर्थपरक धातु से निष्पन्न 'पत्रकारिता' का अर्थ है- "पत्र-पत्रिकाओं के लेखन-पठन-मुद्रण-प्रकाशनादि स्वभाव से 'युक्त कर्म' इसी प्रकार द्वितीय पद 'पत्रं करोति' इस विग्रह से 'पत्रकारिता' का अर्थ है 'पत्र' या 'पत्रिका' को लिखने वाला अथवा लिखवाने वाला, प्रकाशित करने वाला प्रसारण करने वाला, मुद्रित रूप प्रकाशित करने वाला। वस्तुतः वार्तापत्र एवं साहित्यिक पत्रिकाओं के लेखन-प्रकाशन-मुद्रणादि कार्यों के लिए 'पत्रकारिता' यह शब्द एवं अन्य भाषाओं में व्यावहृत एवं प्रचलित होकर लोकप्रिय हुआ है। बाद में संस्कृत में भी 'पत्रकारिता' शब्द का व्यापक प्रयोग किया जाने लगा है।"

वस्तुतः पत्रकारिता के तीन प्रयोजन हैं- लोक की जानकारी प्रदान करना, मनोरंजन एवं शिक्षण। संस्कृत-बाल-पत्रिकाएं जहाँ एक तरफ बालकों को भाषा परिपक्वता हेतु विभिन्न प्रकार के शाब्दिक ज्ञान की शिक्षण सामग्री उपलब्ध करवाती है वहीं दूसरी और विभिन्न लघु-लघु कथाओं, लघु नाटकों के माध्यम से बालकों को मनोरंजन शैली में नैतिक मूल्य प्रदान करने के साथ ही उनका सर्वाङ्गीण विकास भी करती हैं।

इस दिशा में 'दिल्ली संस्कृत अकादमी' में कार्यरत डाॅ. धमेन्द्र कुमार के अथक प्रयासों से बालकों के लिए विशेषतः बाल-चन्द्रिका के नाम से बाल-पत्रिका का सम्पादन किया जा रहा है। इससे पहले ओड़ीशा से 'सुवर्णा भगिनी' नाम से 'बाल-पत्रिका' का प्रकाशन हो रहा था। वर्तमान में बाल-जगत् को ध्यान में रखते हुए अनेक सरल-सरस भाषा शैली में बाल-पत्रिकाओं का सम्पादन किया जा रहा है जिनमें-सम्भाषण सन्देशः, संस्कृत-चन्दामामा, कथासरित् पद्यबन्धा, प्रतिभा, भारती, लोकसंस्कृतम् इत्यादि प्रमुख हैं।

संस्कृत-प्रतिभा - साहित्य अकादमी नई दिल्ली से प्रकाशित यह षाण्मासिक पत्रिका हैं। डाॅ. व्ही राघवन् के अनेक वर्षों की कठिन मेहनत एवं निष्ठा के अनन्तर इसका प्रकाशन प्रारम्भ

हुआ था। संस्कृत-प्रतिभा पत्रिका मूलतः रचनात्मक साहित्य से युक्त पत्रिका हैं। इसके प्रत्येक अंक में संस्कृत भाषा में अनूदित काव्य, गद्य विधा में कहानी, कथानिका, बाल-कथा, लघुकथा, ललित निबंध, रूपक (एकांकी) तथा पद्यविधा में बाल-गीत, लघुगीत आदि काव्यों के आलेख भाग इसमें छपते हैं। संस्कृत प्रतिभा की एक बड़ी विशेषता है- सद्य प्रकाशित कृतियों की संक्षिप्त समीक्षा। पत्रिका के 'निकषोपलः' स्तम्भ के प्रत्येक अंक में 20-25 पद्य रचित कृतियों का संक्षिप्त परिचय परिलक्षित होता है। प्रतिभा में बाल-साहित्य की बालोपन्यास, बाल-एकांकी, बाल-कथा आदि विधाओं की कृतियों का परिशीलन भी यदा-कदा देखने को मिलता हैं।

पद्यबन्धा - प्रो. बनमाली बिश्वाल के प्रधान सम्पादकत्व एवं डॉ. धमेन्द्र कुमार सिंहदेव के सह-सम्पादकत्व में पद्यबन्धा नाम से समकालिक संस्कृत-पत्रिका (षाण्मासिकी) भोपाल से प्रकाशित हो रही है। इस पत्रिका में हर तरह की कविता या काव्य यथा-छन्दोबद्ध कविता, मुक्तकच्छन्द कविता, वैदेशिक-छन्दोबद्ध कविता, अनूदित कविता, बाल-कविता, शिशु-गीत, लोक-गीत आदि कविता ग्रन्थ समीक्षा सहित प्रकाशित किए जाते हैं।

कथासरित् -प्रो. बनमाली बिश्वाल और डॉ. नारायणदाश के सम्पादकत्व तथा राकेशदाश के सह-सम्पादकत्व में सन् 2005 ई. से समकालिक संस्कृत कथा-पत्रिका 'कथासरित्' प्रयाग से प्रकाशित हो रही हैं। इस पत्रिका में प्रत्येक प्रकार की कथा, लघुकथा, दीर्घकथा, परिकथा, बालकथा, कथाग्रन्थ समीक्षा, गत अङ्को में प्रकाशित कथाओं की समीक्षा धारावाहिक, उपन्यास, धारावाहिनी एवं दैनन्दिनी इत्यादि गद्य की समस्त कथा विधाओं का प्रकाशन किया जाता है। यह बाल-कथाएँ बालकों को विभिन्न प्रकार से रसास्वादन करवाने में पूर्णतया सक्षम हैं।

संस्कृत चन्दामामा -बालकों में काल्पनिकता का संचार करने एवं चित्रों के माध्यम से संस्कृत भाषा का सरल-सरस रूप से परिचय करवाया जाता है। वस्तुतः प्रत्येक भाषा के दो पक्ष होते हैं सरल एवं कठिन पक्ष। यहाँ प्रस्तुत कथाएँ सरल संस्कृत भाषा में निबद्ध हैं। लघु-लघु बालक, छात्र इत्यादि पाठक उत्साह से चन्दामामा को पढ़ते हैं। यहाँ तक की संस्कृत भाषा के वाचन में भी समर्थ होते हैं। बाल-कथाओं में प्रयुक्त शब्द, प्रयुक्त संधि एवं समास की कठिनता से रहित होते हैं। संस्कृत चन्दामामा में युष्मद् (तुम) शब्द के स्थान पर भवान् शब्द (आप) का उपयोग किया जाता है। 'चन्दामामा' यह नाम भारत देश में सर्वत्र प्रसिद्ध है। सामान्यतः 'चन्दामामा' का सामासिक विग्रह है 'चन्द्रमसः मातुलः चन्द्रमा'। तथा व्युत्पक्तिपरक अर्थ है, चन्द्रमस इव भाति इति चन्द्रमा। चन्द्रकान्तिसदृशी इत्यर्थः।

1984 ई. से संस्कृत भाषा में बालकों के ज्ञानवर्धन के उद्देश्य से आचार्य चक्रपाणी एवं गुरुवर नागिरेड्डी के सम्पादन में 'संस्कृत चन्दामामा' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। यह जनमानस में देववाणी के प्रति अनुराग उत्पन्न करने का सफल प्रयास सिद्ध हुआ था। यह बालकों में संस्कृत सम्भाषण की प्रवृति का वर्धन करता हैं। यथा संस्कृत चन्दामामा के मुखपृष्ट पर उल्लेखित है-

> "अन्यस्य सम्भाषणं जागरुकतया परिशीलनीयस्य अन्येन कृताः दोषाः स्वभाषणे यथा न भवेयुः तया जागरुकता समाश्रयणीया। सम्भाषणपरम्परायाः उज्जीवने सर्वै संस्कृतज्ञाः सश्रद्धाः भवेयुः।।"43

सम्भाषण सन्देशः -"सुलभा रम्यता लोके दुर्लभं हि गुणार्जनम्" अर्थात् सौन्दर्य लोक में सुलभ है किंतु गुणसम्पत्ति प्राप्त करना अत्यन्त कष्टदायक है। अर्थात् सरल, सरस संस्कृतनिष्ठ 'सम्भाषण सन्देशः' (मासिक पत्रिका) के प्रकाशन का मुख्य ध्येय 'संस्कृत भाषा' को जन-जन में लोकप्रिय बनाना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सर्वप्रथम हिन्दू सेवा प्रतिष्ठान द्वारा 1981 ई. में 'सम्भाषाण आन्दोलन' का सभी जगह आयोजन किया गया था। आन्दोलन के सम्पादक समूह द्वारा अनेक प्रकार से चिन्तन करने के अनन्तर यह निश्चित किया गया

कि पत्रिका के सम्पादन का प्रयोजन पाठकों को सन्तुष्ट करना है। यह पाठक सम्भाषण शिविरों में प्रवेशित लघु-लघु बालक, तरुण एवं किशोर है, जिनकों संस्कृत भाषा का सरल एवं मनोर×जक शैली में संस्कृत भाषा में वार्तालाप करवाना मुख्य प्रयोजन है। पत्रिका के नियमित अध्ययन से बालकों में संस्कृत भाषा के वाग्व्यवहार का ज्ञानवर्धन होता हैं। पत्रिका के 'बालमोदिनी' शीर्षक के अन्तर्गत बालकों के लिए सम्भाषण शैली में लघुकथा, लघुउपन्यास, कथानिकाओं का प्रकाशन किया जाता है। साथ ही 'शब्दमाला' शीर्षक में बालकों के लिए दैनन्दिन व्यवहार में प्रयुक्त शब्दों का अभ्यास करवाया जाता हैं। सम्पादक का कथन है कि जिस प्रकार भोजन के बिना जीवन असम्भव है, उसी तरह नवीन शब्दों के बिना भाषा व्यवहार भी नहीं हो सकता हैं, यथा-

> "आहारं विना जीवनं यथा न प्रचलति तथा नूतनशब्दान् विना भाषाव्यवहारः अपि। नूतनशब्दानां निर्माणे स्वेच्छया व्यवहारः न युक्तः। यदि प्राज्ञाः शब्दान् निर्माय दद्युः तर्हि व्यवहारः सुकरः। व्यवहारे सौकर्यं सम्पादनीयम् इत्यतः एषा योजना-शब्दशाला।"44

वर्तमान में पत्रिका के प्रधान सम्पादक जर्नादन हेगड़े एवं परामर्शदाता मण्डल में डाॅ. एच.आर. विश्वास है। इसी तरह वर्तमान में काॅमिक्स, एनिमिशन चलचित्रों के अन्तर्गत विभिन्न पौराणिक आख्यानों यथा (बाल गणेश) को आधार बनाकर भी ज्ञानवर्धक एवं मनोरंजन प्रधान चलचित्रों का निर्माण किया जा रहा है, यथा संस्कृतबाल साहित्य परिषद् पुण्डुचेरी के अध्यक्ष डाॅ. सम्पदानन्द मिश्र द्वारा 'बाल गणेशः' चलचित्र का निर्माण किया गया है जो बालकों में रचनात्मक सोच को जाग्रत करती है।

इसी तरह बाल जिज्ञासाओं एवं बाल-समस्याओं का समाधान करने हेतु नवीन बाल विधा 'प्रहेलिका' का भी आविर्भाव हुआ है।

वस्तुतः प्रहेलिका का उद्गम अलङ्कारशास्त्र में परिलक्षित होता हैं। अलंकारशास्त्र में दो अर्थों के प्रतिपादन के लिए श्लेष अलंकार का प्रयोग किया जाता है। अतः एक पद के दो अर्थ

प्रतिपादित करने वाला 'श्लेष अलंकार' ही बाल-साहित्य में परिगणित प्रहेलिका विधा का उद्गम स्थान माना जाता है। सुविख्यात बाल-साहित्यकार ऋषिराजजानी द्वारा रचित 'कपिः कूर्दते शाखायाम्' (बालगीत) काव्य में 'विहगवृन्दम्', जानन्तु माम, एवं 'समस्यापूर्तिः' प्रहेलिकाओं के माध्यम से विभिन्न चर-अचर जगत् से बालकों को अवगत करवाने हेतु लगभग 18 प्रहेलिकाओं की रचना की गई हैं यह प्रहेलिकाएँ बालकों का ज्ञानवर्धन करवाने के साथ-साथ उनकों मनोरंजन प्रदान करने के उद्देश्य की भी पूर्ति करती हैं यथा-

"श्यामवर्णो रसालेऽहं
गायामि मधुरं सदा।
चैत्रमासे प्रसन्नोऽहं
वदन्तु कोऽस्मि बालकाः।।" (कोकिलः)

इसी तरह एक ओर दृष्टान्त उल्लेखित हैं-

बिले वसामि गेहेषू
'चूं चूं' ध्वनिं करोम्यहम्।
कर्तयामि च वस्त्राणि
गणाधिपस्य वाहनम्। (मूषकः)

अतः बालसाहित्यकारों ने बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए प्रहेलिकाओं की रचना की हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. काव्यालंकार, आचार्य भामह, 1/16, पृ.-13, देवेन्द्र नाथ शर्मा, विद्या राष्ट्रभाष परिषद्, पटना, 1962।

2. रसगंगाधर, पण्डितराज जगन्नाथ, 1/1, पृ.-10, भट्टमथुरानाथ शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1983।

3. ध्वन्यालोक, आचार्य आनन्धवर्धन, 1/7, आनन्दवर्धन मिश्र, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, 1991।

4. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, परिचयोन्मेष/38-40, पृ.-51, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद,

2006।

5. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, परिचयोन्मेष/46, पृ.-58

6. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी 1/1/1, पृ.-1, प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी, वाराणसी।

7. संस्कृत बाल-साहित्य परिषद, पुण्डुचेरी के अध्यक्ष प्रो. सम्पदानन्द मिश्र का वक्तव्य।

8. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/19, पृ.-197

9. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम्, प्रो. त्रिपाठी, 3.1.1, पृ.सं.-145

10. भिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, 4/50, पृ.-206

"श्रव्यकाव्यमथेदानीं प्राप्तकं यन्निरूच्यते।

गृह्यते हि यदानन्दो रसिकैः श्रुतिसङ्गतः।।"

11. साहित्यदर्पणम् (6/332-2)

"आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम्।

अन्यद्दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम्।।", पं0 विश्वनाथ, भारतीय विद्याभवन, दिल्ली,

1988।

12. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/50-55, पृ.-228

13. पताका (बालोपन्यास), डाँ. केशवचन्द्रदाशः, पृ.-103, डाॅ0 केशवचन्द्र दास, लोकभाषा प्रचार समिति, पुरी, 1990।

14. कान्तारकथा (अनूदित बालकथा), प्रो. मिश्र, पृ.-38, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद, 2007।

15. चमत्कारिकः चलदूरभाषः, ऋषिराज जानी, पृ.-35, पाश्र्व पब्लिकेशन, अहमदाबाद, 2013।

16. साहित्यदर्पणम्, पं. विश्वनाथ, पृ.-224

17. अभिराजयशोभूषणम्, पृ.-211

18. ध्वन्यालोक की लोचन टीका (आचार्य विश्वेष्वर सिद्धान्तशिरोमणि कृत व्याख्या) 3/7, पृ.-182

19. बालतरङ्गिणी, डाँ. रामकिशोर मिश्र, पृ.-23, पठ्ठीरामपुरम्, खेकड़ा, 2001।

20. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.-32, अभिराजराजेन्द्र मिश्र, वैजयन्त प्रकाशन, इलाहबाद, 2008।

21. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.-92

22. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.-91

23. कौमारम्, प्रो. मिश्र, पृ.-95

24. 'बालतरङ्गिणी ' डाँ. रामकिशोर मिश्र, पृ.-37-38

25. स हित्यदर्पणम्, 6/329, पृ.-226

26. अभिराजयषोभूषणम्, प्रो. मिश्र 4/81-82, पृ.-224

27. अभिराजयषोभूषणम्, प्रो. मिश्र 4/83-84, पृ.-226

28. कपिः कूर्दते शाखायाम्, ऋषिराजः जानी, खुशबू प्रकाशन, अहमदाबाद, 2016।

29. साहित्यदर्पणम्, सप्तम परिच्छेद/332, पृ.-226

30. विश्वकथाशतकम् (प्राक्कथनम्), आचार्य पद्मशास्त्री, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2005।

31. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/97-99वीं कारिका, पृ.-231

32. अग्निपुराण, 336/18, तारिणीश झा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1998।

33. गद्यकाव्यमीमांसा, 1/25/26,

34. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/111-114, पृ.-235

35. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेषः/120, पृ.-249

36. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितित्त्वोन्मेष/105-10, पृ.-233

37. साहित्यदर्पणम्, षष्ठ परिच्छेद/प्रथम कारिका

38. अभिनवकाव्यालंकार, प्रो. त्रिपाठी, 3/1/1, पृ.-145

39. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्वोन्मेषः/20, पृ.-197

40. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद/25, पृ.-198

41. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद/27-29, पृ.-199

42. अभिराजयशोभूषणम्, प्रो. मिश्र, निर्मितितत्त्वोन्भेद/40-46, पृ.-203-205

43. संस्कृत चन्दामामा, अक्टोम्बर 1984 (मुखपृष्ठ भाग)

44. सम्भाषण सन्देशः (शब्दमालाः) सेप्टेम्बर, 1994 ई., पृ.-14